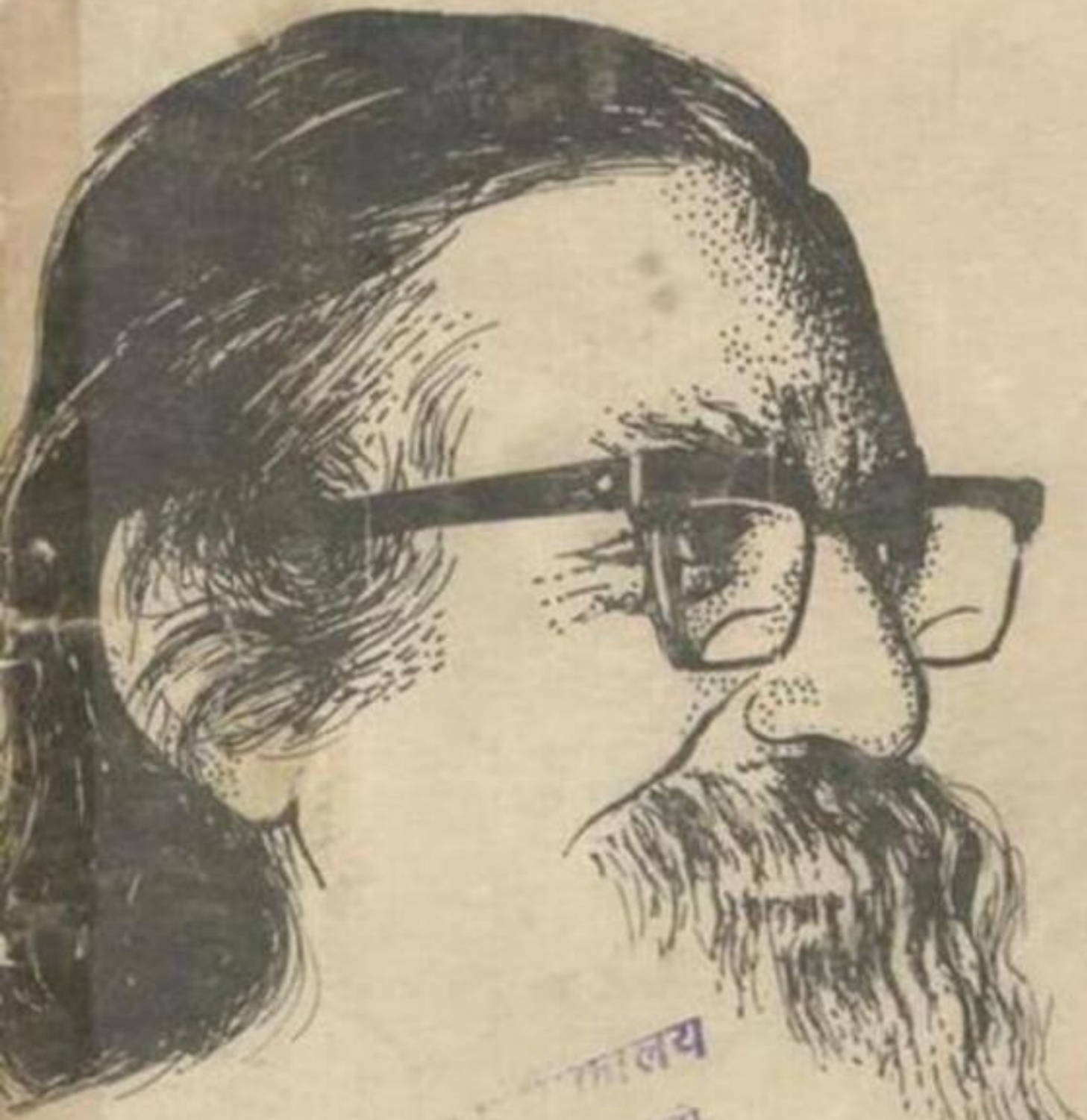

नवदधीचि

निवेदन

अनेक गुजराती प्रकाशनों के बाद हिन्दी में पुस्तक प्रकाशित करनेका "मधु" का यह प्रथम प्रयास है। बड़ौदा में आयोजित कार्यक्रम में मा. श्री दत्तोपंतजी ठेंगड़ी द्वारा प. पू. श्री गुरुजी को दी गयी श्रद्धांजलि "नवदधीचि" पाठकों को समर्पित है।

यह लिखित पुस्तक नहीं, परन्तु भाषण है अत: उसकी मर्यादा समझकर तथा हिन्दी का हमारा यह प्रथम प्रयास होने के कारण यदि कुछ क्षतियाँ रही हो तो पाठक हमें क्षमा करेंगे।

रक्षाबन्धन -प्रकाशक

१३.८.७३

प्रकाशक :

चंपकलाल सुखडीया

६६, चौटापुल

सूरत-१

मूल्य-०.७५ पैसा

रक्षाबन्धन

वि. सं. २०२५

मुद्रक :

मनसुखलाल एम. राणा,

श्रो महेश्वर प्रिन्टींग प्रेस

नवापुरा करवारोड़

सूरत-१

नवदधीची

जहाँ तक मुझे स्मरण है, दो साल पहले यहाँ के अपने स्वयंसेवक बन्धुओं के साथ बातचीत करने का अवसर प्राप्त हुआ था। किन्तु, जिन परिस्थितियों में आज यहाँ हमारा एकत्रीकरण हो रहा है, यह बिलकुल भिन्न है।

इस समय सभी लोगों के मन में उत्कट भावनायें हैं और उसे ठीक शब्दों में प्रकट करना कठिन है, यह बात भी सब लोग जानते हैं। एक पंक्ति मैंने पढी थी, "खामोशी गुनगुना रही है, आज बेजुबाँ है जबाँ मेरी।" आज मेरी वाणी मूक हो गयी है ऐसा कवि कहता है। शायद आज यही भावना हम में से हर एक के हृदय में है। परम पूजनीय श्री गुरुजी, उनका पार्थिव शरीर आज हमारे बीच से निकल गया है। यह तो एक ऐसी घटना है जिसे प्रत्यक्ष देखने के बाद भी, मन उस पर विश्वास नहीं करता। हम सबके लिये श्री गुरुजी हमारे बीच नहीं है, यह कल्पना करना भी कठिन है, किन्तु यह एक सत्य घटना हैं। दिनांक पांच जून को रात के नौ बजकर पाँच मिनट पर श्री गुरुजी ने महानिर्वाण किया। संयोगवश पूर्व नियोजित कार्यक्रम के अनुसार उसी दिन २:३० बजे दोपहर में, मैं वहाँ पहुँचा था, किन्तु प्रत्यक्ष महानिर्वाण के समय मैं उपस्थित नहीं था। वर्ग में चला गया था और कारण यही था कि उसी दिन उन्हें कुछ होगा ऐसा किसी ने सोचा नहीं था। अवस्था नाजुक है यह तो सब देख रहे थे। लेकिन इस तरह कि अंतिम अवस्था पहले भी आयी थी और इसलिये उसी रात को ऐसा कुछ होगा ऐसा सोचा नहीं गया था। मैं वर्ग में था, वहाँ यह समाचार मिला।

आखिरी चाय

दोपहर ३:०० बजे से सायं ७:४५ तक श्री गुरुजी के पास मुझे बैठने का अवसर प्राप्त हुआ था। पीड़ा तो बहुत थी। लेकिन उस अवस्था में भी जो लोग उन्हें मिलने आते थे उनके साथ बात करने की प्रवृत्ति, उनका कुशल मंगल पूछने की प्रवृत्ति, यह दूसरे को गुमराह करने वाली थी। उस दिन दोपहर के ३:३० बजे जिन लोगों के साथ श्री गुरुजी की आखिरी चाय हुई, उस समय हम ४-५ लोग कार्यालय में उपस्थित थे। उसी समय

उनसे मिलने के लिये अहमदाबाद के एक परिवार के लोग वहाँ आये थे। श्री महेश मेहता और श्री सुभाष मेहता तथा उनकी पत्नियाँ, जो अभी न्यूयोर्क में हैं, यहाँ उनकी भतीजी के विवाह के अवसर पर आये थे। वे सपरिवार श्री गुरुजी के दर्शन के लिये आये थे। वे चाय के समय वहाँ थे। उस समय श्री गुरुजी को Hard breathing, श्वास लेने में बहुत कष्ट हो रहा था। हम लोगों को बाहर से ही सूचना थी "बोलिये मत।" किन्तु जैसे ये लोग अंदर आकर बैठे श्री गुरुजी ने पूछा, "क्यों भाई, तुम लोग विवाह के निमित्त आये थे, अभी कितने दिन यहाँ रहोगे ?" फिर से पूछा, "आप न्यूयार्क में रहने वाले हैं या हिन्दुस्तान में आनेवाले हैं?" उन्होंने कहा, "हम हिन्दुस्तान आनेवाले हैं।" श्री गुरुजी ने आगे जानना चाहा, "सर्विस करोगे या कारखाना ?" उन्होंने कारखाना निकालेंगे ऐसा उत्तर दिया। तो गुरूजी ने पूछा, "प्लास्टिक का ही न?" श्री मेहता ने उस पर कहा "हाँ, प्लास्टिक का ही।" "बडौदा में ही निकालोगे न ?" उन्होंने कहा "हाँ।" जब जोर का palpitation चल रहा हो, बोलने में भारी कष्ट होता हो ऐसे समय का यह प्रसंग है। इतने में चाय आयी। चाय देने वाले जो अपने स्वयंसेवक थे, वे सबको चाय देने लगे। मेहता परिवार नागपुर के अपने स्वयंसेवक प्रेमजी भाई के यहाँ ठहरा था, वे साथ में थे। जब स्वयंसेवक श्री प्रेमजी भाई के सामने चाय रखने लगा, श्री गुरुजी ने कहा, "प्रेमजी भाई चाय नहीं लेते उनके लिये दूध या तो शरबत जैसा कुछ लाओ।" प्रेमजी भाई कोई संघ के बड़े अधिकारी नहीं है। सार्वजनिक जीवन में कोई बड़े व्यक्ति भी नहीं है। किन्तु श्री गुरुजी के मन में छोटे से छोटे स्वयंसेवक के साथ भी जो अपनापन है उसका यह परिचायक है। जब श्वास लेने में भी बड़ी पीड़ा हो रही थी, अपने को संभालना भी बड़ा कठिन था, प्रेमजी भाई चाय नहीं लेते इस बात का स्मरण रखना, छोटा सा प्रसंग हैं, परन्तु अपने परिचय में आने वाले सब लोगों के प्रति उनके मन में जो आत्मीयता रहती थी, इसका यह द्योतक है।

मृत्यु का स्वागत कैसे करोगे?

बाद में सब लोगों को बडा दु:ख हुआ। वे अपने बारे में तो कुछ नहीं, हमारी पूछताछ करते रहते हैं। यह जो उनका अन्तिम निवास नागपुर में था उस समय लोगों को कष्ट न हो इसलिये वे अपनी पीड़ा, अपने कष्ट किसी को बताते नहीं थे। आखिरी दिनो में लगातार

कई दिन तक वे रात को बिस्तर पर सोये नहीं, कुर्सी पर बैठे रहते थे; यह लोगों को कई दिनों के बाद accidently पता चला। उन्होंने स्वयम् अपनी ओर से बताया नहीं। कितनी भी पीड़ा हो, जो कोई मिलने आता, उनसे पूछते, "भाई तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है?" ऐसे ही वे अपनी पीड़ा को बरदाश्त करते रहे। जिस ढंग से उन्होंने वह सारी पीड़ा सही, लगता है हम सब लोगों को सबक ही सिखा गये कि किस तरह मृत्यु का स्वागत करना चाहिए। खड़े होने में भी उनको कष्ट होता था। खड़े होकर बैठने में उनको दम लगता था। ज्यादा देर तक खड़े नहीं हो सकते थे तो भी आखिर तक प्रार्थना का आग्रह नहीं छोड़ा; बिलकुल आखरी दिन तक, जब खड़े होकर प्रार्थना करना सम्भव नहीं हुआ, तब बैठकर प्रार्थना की। भारत माता की जय कहा। यही थे उनके अन्तिम शब्द। बिलकुल आखिरी दिन तक, वह एक अन्तिम दिन छोड़ दिया तो, बड़े कष्ट बर्दाश्त करते हुए भी प्रार्थना बराबर करते रहे। यह जो सारा उनका व्यवहार रहा, मुझे लगता है कि हम लोगों को उन्होंने अपने जीवनकाल में, जीवन किस तरह जीना चाहिए यह सिखाया, मृत्यु में यह भी सिखाया कि मृत्यु का स्वागत किस तरह करना चाहिए। यह बात सही है कि हम सब स्वयंसेवकों को यह जो अन्तिम समाचार है वह कुछ धक्का देने वाला था। क्योंकि थोड़े ही दिन पूर्व समाचार आया था कि श्री गुरुजी की तबियत अच्छी हो रही है। तृतीय वर्ष के संघ शिक्षा वर्ग में आये हुए स्वयंसेवकों से वे प्रान्तश: मुलाकात करते रहे। बातचीत करते रहे। Terrace में उनका घूमना भी चालू था और इन समाचारों के बाद एकदम यह दु:खद समाचार सुनने की मन:स्थिति में हम नहीं थे। सुबह डॉ.आबा साहेब थत्ते को उन्होंने कहा, "भाई, मालूम होता है कि आखिरी घण्टी बज रही है।" हमेशा जब वे कुर्सी पर बैठे रहते थे, उनका कमण्डल बाँये और रखते थे। केवल प्रवास पर जाते समय दाँये हाथ कमण्डल लेकर जाने की उनकी प्रथा थी। लेकिन उस दिन सुबह से ही, अपना कमण्डल हमेशा की तरह बाँये और न रखकर दाँये ओर रखा। जो बात उन के अन्त:वासियों को कुछ असामान्य जैसी, माने हमेशा जैसी नहीं लगी। उस दिन जब श्री गुरुजी की तकलीफ बढने लगी, डॉक्टर लोगों ने एक सुझाव दिया "श्री गुरुजी अगर नर्सिंग होम में शिफ्ट हो तो अच्छा रहेगा।" वैसे तो थोड़े ही दिन पूर्व श्री गुरुजी ने निश्चय से कहा था, "मैं कार्यालय को तब तक नहीं छोड़ने वाला हूँ, जब तक मैं नीचे जाकर प्रार्थना करने की अवस्था में

नहीं आता, या दौरे पर जाने की अवस्था में नहीं आता। तब तक मैं कहीं नहीं जाऊँगा।" ऐसा उन्होंने निश्चय पूर्वक कहा था। इसलिये डॉक्टरों ने डरते- डरते कहा था, "अच्छा होगा अगर नर्सिंग होम में शिफ्ट हो तो।" परंतु इस पर श्री गुरुजी ने हँसकर पूछा, "डॉ.जोशी के नर्सिंग होम में ?" "हाँ, वहाँ जायेंगे तो अच्छा रहेगा।" फिर उन्होंने हँस दिया और कहा, "अच्छा भाई, कल देखेंगे।" वास्तव में वे एक दम इस बात को Reject ही करेंगे ऐसा सब लोग सोचते थे। लेकिन जिस ढंग से उन्होंने इस बात को लिया, डॉक्टर लोगों को थोड़ा विचित्र सा लगा। उन के लिये ऊँचा नीचा किया जा सके ऐसा फाउलरकॉट (Fowler Cot) लाने की बात की। उन्होंने कहा, "भाई, जरूरत क्या है?" Cot लायी गई। वह Cot जब तैयार हो रही थी वे हँस रहे थे। उन्होंने उसका स्पर्श भी नहीं किया। उस पर बैठे भी नहीं। और भी कुछ घटनायें ऐसी रही, जिसके कारण पार्थिव शरीर में उनका अंतिम दिन होने का उनको ज्ञान हो गया था।

चार कदम आगे बढकर...

तबियत कुछ अच्छी हो रही है, एकदम खराब हो गई, यह बात तो ठीक है। लेकिन तबियत जिस समय कुछ अच्छी हुई थी, उनके मन में कुछ पीड़ा थी। वे सोचते थे, कहते भी थे, "भाई, यह शरीर अब इतना जरजर हो गया है, सामान्य व्यवहार में भी दूसरों की सहायता लेनी पड़ती है। इस तरह जीने में क्या फायदा है?" यह बात उनके मन में रहती थी और समय असमय प्रगट भी होती थी। इसलिए ऐसा लगता है कि परम पूजनीय गुरुजी ने यह मान लिया था कि अंतिम घड़ी निकट है। हो सकता है उन्होंने भी इस पर कुछ विचार किया हो। मृत्यु स्वाभाविक रूप से उनकी ओर चार कदम आगे बढ़कर आयी थी या वे स्वयं चार कदम आगे बढकर मृत्यु से हस्तमिलाप करने गये थे। स्वातंत्र्यवीर सावरकरजी का स्वर्गवास जिस ढ़ंग से हुआ था, उसे उन्होंने "प्रायोपवेशन" कहा। स्वयं धीरे धीरे सब चीजें छोड़कर मृत्यु के सामने पेश होना, क्या ऐसा यह मामला नहीं था? इतना ही था कि सावरकर जी ने घोषणा की थी, इन्होंने नहीं की। ऐसा तो कुछ मामला नहीं था? यह अन्वेषण का विषय हो सकता है।

मित्र, पिता, कर्ता

उनके चले जाने से सारे देश पर दु:ख और शोक की गहरी छाया फैल गई है। किसका कितना नुकसान हुआ, क्या क्षति हुई, यह बताना बड़ा कठिन है। क्योंकि क्या स्वयंसेवक, क्या Non-Swayamsevak ऐसे असंख्य लोग थे, जिनके साथ उनके प्रेम के, आत्मीयता के संबन्ध थे। सार्वजनिक जीवन में नेता और अनुयायी या तो नेता और उन के प्रशंसक ऐसा कहा जाता है। वे नेता नहीं थे हमारे लिये। सभी स्वयंसेवकों को तथा बाहर के समाज के लोगों को भी वे बड़े भाई या पिता के समान लगते थे। हर एक के सुख-दु:ख में वे सुखी और दु:खी होते थे।

असंख्य लोग ऐसे थे, जो अपनी व्यक्तिगत और पारिवारिक सुख- दु:ख की बात व्यक्तिगत रूप से या पत्र लिखकर उनको बताते थे और उनसे प्रेरणा, मार्गदर्शन तथा सांत्वना पाते थे। ऐसे असंख्य लोग थे। मुझे लगता है कि पिछले सौ वर्षों में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसका व्यक्तिगत पत्र व्यवहार इतना बड़ा हो और यह सारा व्यक्तिगत पत्र व्यवहार वे अपने ही हाथों से करते थे। आखिर तक, जिस दिन महाप्रयाण किया उस दिन भी पत्र लिखे। वास्तव में सब सुविधायें थी। कार्यालय में टाइपराइटर थे, स्टेनो थे, सब कुछ था लेकिन एक-एक व्यक्ति को जो पत्र जायेगा उसमें मेरा और उसका व्यक्तिगत संबन्ध है, बीच में टाइपराइटर की आवश्यकता नहीं, इस दृष्टि से हर एक पत्र स्वयं अपने ही हाथों से लिखते थे। मुझे तो ऐसा निश्चयपूर्वक लगता है कि ऐसा दूसरा व्यक्ति नहीं होगा। हर एक के साथ व्यक्तिगत सम्बन्ध हो इस दृष्टि से कई परिवार थे। कहीं विवाह जमाते, कहीं पारिवारिक पार्टिशन के झगड़े निपटाते, कहीं मध्यस्थता करते, ऐसी कई घटनायें हैं और ऐसे कई परिवार है जिनमें उन्होंने परिवार के कर्ता पुरुष के नाते काम किया। मानो इतने लाखों परिवारों को अपना कर्ता पुरुष अपने बीच से आज निकल गया है, ऐसी भावना हो रही है। राजा रघु के बारे में कहा गया कि रघु राजा वास्तव में सबका पिता था। जिन्होंने जन्म दिया वे तो केवल जन्म के लिए हेतु मात्र थे। वास्तव में पिता तो रघु राजा ही था। रघुवंश में कहा गया है “स पिता पितरस्तातां, केवलं जन्म हैतवो”, ऐसा कहा है। श्री गुरुजी के बारे में ऐसी जिनकी धारणा थी ऐसे असंख्य परिवार हिन्दुस्तान में हैं। लाखों परिवार यानि अंसख्य लोगों का मित्र, पिता, कर्ता यह सारी भूमिका उनमें एकत्रित थी।

सम्मिलित श्रेष्ठ व्यक्तित्व होते हुए भी, सबके साथ उनके स्तर पर आकर बातचीत करते थे। बाल स्वयंसेवकों को भी दूरत्व का अनुभव नहीं हुआ। His genius was versatile. He could talk with persons from different walks of life in the language they could understand. In Feb 1946 while talking to an eminent Doctor at Calcutta, who doubted the efficiency of R.S.S. technique in achieving the professed objective. Shri Guruji asked, "Out of what material the then Master drug of Allopathy i.e. Penicillin was prepared?" "Out of waste, stinking food" The Doctor replied. "Does it not mean that even the worst thing can yield the best results at the hands of the experts?" Asked shri Guruji. And after receiving the affirmative answer from flabbergasted Doctor, he immediately added, "and here we are the experts in the Science of Organisation." What is organisation? How it differs from a mere crowd? To a scientist he explained that it was a difference between a chemical compound and a mechanical mixture.

Explaining to some farmers of Vidarbha the concept of 'Nationalism' he used the analogy of 'Crop and weed', in the same form to indicate the respective roles of the patriots and the strangers residing here but not yet identified with the main stream of national life.

To a lawyer karyawaha he advised the policy of 'Factum Valet' in case of an erring but repenting Swayamsevak of his Shakha. And to a Professor steeped in the traditional knowledge he told during his last sickness that he had taken the 'kshetra sanyasa', concept which only an expert culturist can understand.

अजानता महिमानं तवेदं-

मैं एक समय उनके साथ था। छोटा स्वयंसेवक, उसको शिशु स्वयंसेवक ही कहना चाहिए। हम उसके वहां कार में गये थे। वह स्वयंसेवक सामने आया और एका एक पूछता

है, "क्यों रे ! यह तेरी कार है रे?" उसको पता ही नहीं था कि तुम्हारी, आपकी वगैरह कहना चाहिए। उन्होंने कहा, "हाँ!" "तो अब इसमें बैठकर तू जानेवाला है।" शिशु के पूछने पर परम पूजनीय गुरुजी ने कहा, "हां जरुर जाऊंगा।" अभी यह बात तो छोटीसी है। एक शिशु स्वयंसेवक बिलकुल निर्भीक चित्त से आत्मीयता से उन्हें, "क्या यह तेरी कार है" ऐसा पूछ सकता है। ऐसे कितने बड़े लोग हिन्दुस्तान में होंगे जिनके साथ छोटासा शिशु भी इस तरह बात कर सकता हो? एक Prophet के बारे में कहा गया, उन्होंने कहा, बच्चों को मेरे पास आने से मत रोको। परम पूजनीय गुरुजी का यही हाल था और इसी कारण बच्चों को भी लगता था कि यह अपना खेल का एक साथी है, जिसके साथ बात कर सकते हैं, मजाक कर सकते हैं। अब यह बच्चों को ही लगता था ऐसी बात नहीं। हम लोग जो उम्र से बड़े हो गये हैं, उनके साथ रहते थे, भूल ही जाते थे कि वे क्या हैं ? ऐसा लगता था कि अपने साथ बातचीत करने वालों में से एक है, थोड़ा-सा बड़ा हो गये तो उससे क्या है? यानि अपने बड़प्पन का आभास उन्होंने अपनी बातचीत या व्यवहार में कभी भी नहीं आने दिया और इसलिये जब कभी प्रसंगवशात् उनके श्रेष्ठत्व का एकदम साक्षात्कार होता था, वह प्रकट होता था, हम सब लोगों की भावना ठीक अर्जुन के जैसी हो जाती थी, जैसे विराट विश्वरूप दर्शनके पश्चात अर्जुन ने कहा, चाहे प्रेम से हो या गलती से हो, मैंने हे कृष्ण! हे सखा! हे यादव! ऐसा Singular में ही पुकारा, मैंने बराबरी के नाते आपसे बात की, यह तुम्हारे श्रेष्ठत्व को न जान सकने के कारण मेरी गलती हुई है; इसलिये भगवान मुझे क्षमा करो।

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखेति।

अजानता महिमानं तवेदं, मया प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥ -गीता (११/४१)

ठीक हम लोग भी ऐसा अनुभव करते हैं। कभी पता ही नहीं लगा उनके बड़प्पन का, श्रेष्ठत्व का। सच्चा श्रेष्ठत्व वही है जो स्वयं अपने को भूल जाता है। कभी यह ख्याल तक नहीं कि वे अन्य लोगो से कुछ श्रेष्ठ है।

जिसके साथ बात करते थे उसके साथ एकात्म होकर बात करते थे। इसके कारण सभी उम्र के, सभी स्तर के लोगों से इतनी आत्मीयता उन्होंने प्राप्त की, कि किसका कितना नुकसान हुआ यह कहना कठिन है। व्यक्तिगत रूप से लाखों परिवारों को नुकसान हुआ है। कई लोगों को केवल उनके पास जाकर बैठने से सांत्वना मिलती थी, मार्गदर्शन मिलता था। अब यह सब कैसे होगा? इस रिक्तता की पूर्ति कैसे होगी? यह विचार सबके मन में है। मार्गदर्शन व्यक्तियों को था, परिवारों को था, विभिन्न संस्थाओं को भी था। कितनी संस्थाओं को था इसकी गिनती करना कठिन है।

मात्र हिंदू ही नहीं

आज तो सार्वजनिक जीवन में थोड़ा सा भी किसी ने काम किया तो एकदम प्रसिद्धि के पीछे जाते हैं। छोटी-सी घटना हुई तो एक दम प्रसिद्धि कर देते है। यहाँ तो प्रसिद्धि का नाम नहीं। लोगों को यहाँ तक पता नहीं कि कितने लोगों के साथ श्री गुरुजी का प्रत्यक्ष संबन्ध था, कितनी संस्थाओं के साथ था। कभी प्रसिद्धी के पीछे नहीं गये। उनकी अंतिम बीमारी में भी उनकी प्रसिद्धिपरांगमुखता का यह अनुभव आया। महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री श्री वसंत राव नाईक उनसे मिलने के लिये आये। वहाँ बातचीत हुई। यह बात अखबारों में नहीं आई, संघ कार्यालय के समाचार में भी नहीं थी। नहीं तो हमने ऐसे लोग देखे हैं, कोई भी आते हैं तो खटाक से समाचार छप जाता हैं कि फलां फलां आये थे। अप्रैल के अंत में Socialist Party के प्रधान जोर्ज फर्नाण्डीज का चिंता और शुभेच्छा व्यक्त करने वाला पत्र आया था। कहीं भी उसका जिक्र नहीं। विभिन्न लोगों के मनमें इस तरह की आत्मीयता की भावना थी। केवल हिन्दुओं में ही थी ऐसा नहीं। लोगों को कल्पना नहीं होगी उतने अहिन्दुओं से उनका आत्मीयतापूर्ण संपर्क था। राज्यसभा में जाने के पश्चात मुझे यह अनुभव हुआ। Mr. Joachim Alva और उनकी पत्नी Violet Hari Alva जो राज्यसभा की Deputy Chairperson थी, जब कभी राज्यसभा का पहला Session शुरू होता था वे यही प्रश्न पूछते-"क्यों भाई! नागपुर से आ रहे हो?" हमने कहा, "हाँ, नागपुर से आ रहा हूँ।" "तो गुरुजी की तबियत कैसी है?" यह पूछताछ होती रही। अभी जब समाचार आया था कि परम पूजनीय गुरुजी का स्वास्थ्य अच्छा हो रहा है, तब

उन्होंने कहा था, "समाचार विश्वसनीय नहीं लगता। एक बात है, श्री गुरुजी को London ले जाने के लिये मेरा सुझाव है और आवश्यक सभी सुविधा कर देने को मैं तैयार हूँ।"

मोहम्मदअली भी अनाथ

गुरुजी की मृत्यु के पश्चात का एक प्रसंग है। मैं जब INTUC में काम करता था श्री मोहम्मदअली नाम के सज्जन से मित्रता हुई थी। वह कार्यालय में पहुँचा, तो लोगों को लगा यह यहाँ क्यों आ गया ? वह तो गुरुजी को अंतिम दर्शन के लिये जहाँ रखे गये थे वह स्थान देखने आया था। बाहर डराया तो रोने लगा। कहने लगा, "जब कभी आते थे, बड़े प्रेम से, आत्मीयता से पूछते थे, क्या है, कैसा है? बच्चों की पढ़ाई कैसी चल रही है? दुकान कैसी चलती है? तो हमें ऐसा लगता था कि उनका हाथ हमारे सर पर है। अब हम अनाथ हो गये।" ऐसे कई उदाहरण हैं। अन्य संस्थाओं को भी ऐसा ही लगा है। एक ने तो कहा R.S.S. is not Orphaned, R.S.S. में तो सरसंघचालक है ही इसलिये यह तो संभव नहीं। परंतु कई लोगों को जरूर ऐसा लगा है कि They are Orphaned. विभिन्न संस्थाओं के कार्यकर्ताओं के वि िविध कार्यो से उनका संपर्क था। पर वे केवल संघ कार्य में ही थे। सभी कार्यो में मार्गदर्शन करते थे, परंतु वे स्वयं किसी में नहीं थे। विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वालों का मार्गदर्शक गया। उनकी छत्रछाया गयी ऐसा सभी को लगेगा। कितना नुकसान हुआ यह कहा नहीं जा सकता।

वज्रादपि कठोराणि.....

जहाँ तक R.S.S. का संबन्ध है, संघ और गुरूजी का यह द्वैत समाप्त हुआ था। गुरुजी यानि संघ, संघ यानि गुरुजी। बहुत विस्तृत बताने की आवश्यकता नहीं। परम पूजनीय डॉक्टरजी से जो सूत्र हाथ में लिया था, 33 साल तक लगातार, अखण्ड भ्रमण, "चरैवेति" "चरैवेति", का वास्तव में निर्वाह करते हुए, एक कोने से दूसरे कोने तक समस्त देश का भ्रमण लगातार किसी ने किया होगा तो श्री गुरुजी ने। और कितनी ही आपत्तियों से टकराना पड़ा, किन्तु मन का संतुलन न खोते हुये, देश के प्रति जो अविचल श्रद्धा है उसके कारण, हम जो सोच रहे है वही सही है, उसी में राष्ट्र का हित है यह दृढ़ निष्ठा होने के कारण, अपने चरित्र के आधार पर महान संकटों में भी उन्होंने इस नैया को किस तरह

निकाला यह विस्तृत करके बताने की कोई आवश्यकता नहीं है। अपने ध्येय के विषय में स्पष्ट धारणा, और ध्येय का जहाँ तक संबन्ध है किसी भी तरह का समझौता करने की तैयारी नहीं, व्यक्तिगत बातों में मृदुतम, सिद्धांतों के विषय में कठोरतम जैसे कहा जाता है, "वज्रादपि कठोराणि, मृदुनी कुसुमादपि " वज्र से भी कठोर और फूलों से भी कोमल।

Where ever the national interest was concerned, he never left anything to chance. He was strict disciplinarian.

During the I.N.A. disturbances at Calcutta a learned visitor asked him about his reaction to the style of revolt that was being organised there. Without a moment's delay he took out Shakespeare's "Julius Caesar" from the nearby shelf and pointed out the speech of Antony after the furious mob proceeds to attack Brutus. "Mischief, thou art afoot, now take what course thou wilt." Underlining the word "thou wilt" he said "here we differ, not "thou wilt", it ought to be "we wilt."

लोकप्रियता नहीं, राष्ट्रहित

१९४७ के पश्चात हिदुस्तान के सार्वजनिक जीवन का इतिहास देखिये। इस सार्वजनिक जीवन के मंच पर आये हुए जो विभिन्न मत है; राजनैतिक या गैर-राजनैतिक, इन सब मतों का अभिनय किस प्रकार हुआ है, हम देखें। सबके मनमें एक ही कामना है लोकप्रियता प्राप्त करनी चाहिए। परंतु, लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए सिद्धांतों में भी समझौता करने की तैयारी, आज एक बात कहेंगे, कल दूसरी बात। मानो संपूर्ण सार्वजनिक जीवन का उनका लक्ष्य be all and end all यह लोकप्रियता संपादित करना ही है। फिर चाहे वह Power सत्ता प्राप्त करने के लिए हो या सस्ती लोकप्रियता के लिए ही हो। लेकिन गुरुजी का ऐसा नहीं था। जो बात राष्ट्रहित में सही दिखाई देती है, परंतु जनमानस दूसरा होने के कारण वह बात रखने से जनता में अप्रियता प्राप्त होगी, जनता के रोष का भाजन होना पड़ेगा, फिर भी वे नहीं डिगते थे। जनता के रोष को स्वीकार करने की हिम्मत के साथ उन्होंने राष्ट्रहित की ही बात कही। जनता में अप्रियता मिलेगी परंतु राष्ट्र हित के लिए कोई बात आवश्यक है तो मुझे जनता के सामने रखना, स्पष्ट रूप

से रखना, नि:संदिग्ध रूप से रखना, यह काम शायद ही पिछले २५ वर्षों में किसी ने किया होगा। १९४८ के पहले एक महापुरूष थे, वे इस तरह का काम करते थे। उनके पश्चात् शायद अन्य और कोई नहीं जिसने यह काम इतनी कट्टरता से किया होगा। सत्य और असत्य के लिये उन्होंने केवल भगवान को साक्षी रखा। बहुमत-अल्पमत की उन्होंने कभी फिक्र नहीं की। और इसी कारण कई बार जन-मानस की एक लहर उनके खिलाफ उठी है ऐसा हमने देखा है। जिस समय संयुक्त महाराष्ट्र का आंदोलन चल रहा था, उस समय बम्बई में जाकर यह स्पष्ट कहना कि यदि Linguistic states, भाषा के आधार पर राज्यों की रचना राष्ट्र के लिये हानिकारक है। यह बड़े साहस की बात थी। जिस समय पंजाब में सभी गैर सिख हिन्दुओं को विभिन्न दलों ने, राजनैतिक लालच में आकर अपना वोट बढ़ाने के लिये, हमारी मातृभाषा पंजाबी नहीं हिन्दी है, ऐसा लिखवाना चाहिए, ऐसा कहा, उस समय सब लोगों का रोष स्वीकार करते हुए भी स्पष्ट रूपसे गुरुजी ने कहा, "पंजाबी हमारी भाषा है, अत: जो पंजाबी हैं उन्हें पंजाबी लिखवानी चाहिये। लोगों में रोष फैला ही था।"

किंग नहीं, ऋषि

कभी कभी लोकप्रियता को व्यक्तित्व के श्रेष्ठत्व का मापदण्ड माना जाता है। बड़ा सस्ता है। ऐसा माना जाता है कि जो सर्वाधिक लोकप्रिय होगा वही व्यक्ति सर्वश्रेष्ठ है। लेकिन ऐसा यदि मान लिया तो इसमें कई कठिनाइयाँ आती है। कई लोग सत्ता पर होते हैं तो सर्वाधिक लोकप्रिय प्रतीत होते है, पर जब वे सत्ता से हट जाते हैं तो कोई पूछता नहीं; सब भूल जाते हैं। लोग दूसरे व्यक्ति को अर्थात् उगते सूर्य को प्रणाम करते हैं। "Authority forgets the dying king", यह King के बारे में कहा गया है, ऋषि के बारे में नहीं। इसलिये तत्कालीन लोकप्रियता को श्रेष्ठता के मापदंड के रूप में स्वीकार किया तो बड़ा कठिन होगा। श्रेष्ठता का पारिचायक अगर तत्कालीन लोकप्रियता होती है, तो श्री गुरुजी के सत्य भाषण के कारण जनता के रोष की, असन्तोष की लहर उनके विरुद्ध उठती है तो उन्हें श्रेष्ठ नहीं माना जाना चाहिए। यदि ऐसा होता तो हमारे राष्ट्र के मान्यवर क्रान्तिकारी शहीद जिन्होने देश के लिये आत्मबलिदान किये उनकी तुलना में राजकपूर को ज्यादा लोकप्रिय और श्रेष्ठ मानना चाहिये। राजकपूर आ जाये तो जितनी

भीड़ होगी, शायद सरदार भगतसिंह भी दुबारा आ जाये तो इतनी भीड़ नहीं होगी ऐसा लगता है। लेकिन लोकप्रियता स्थायी मापदंड नहीं। Socrates जिसका नाम आज दुनिया में चलता है, उसके विषय में कहा जाता है कि उसके समकालीन लोगों ने उसे मृत्युदंड की सजा दी थी। Hemlock नाम का जहर देकर उसको मरवाया था। समकालीन लोगों का रोष या गलतफहमी यदि व्यक्ति को श्रेष्ठ होने से वंचित रखती है तो Socrates को श्रेष्ठ नहीं माना जाता, लोग उसके खिलाफ हो गये थे; लेकिन आज दुनिया में Socrates का नाम है, उसे विष देनेवाले का नाम नहीं। जीसस का उदाहरण हम जानते है, जीसस को सूली पर चढ़ाया था। उसके समकालीन लोग उसके खिलाफ थे, यहाँ तक की सब लोगों के सामने Choice आया था, एक ओर जीसस है और एक ओर चोर-डकैत है, और शूली एक ही है, तब जीसस को शूली पर चढ़ाया गया। लेकिन आज जीसस को जिन्होंने शूली पर चढ़ाया उनको तथा बच जाने वाले डकैत को कोई नहीं जानता। जिसको लोगों ने शूली पर चढ़ा दिया उसी का दुनिया में बोलबाला चल रहा है। जिस महम्मद साहब को आगे चलकर संपूर्ण अरेबिया ने मसीहा के रूप में स्वीकार किया, उनको एक समय उन्हीं के जन्मस्थान मक्का के लोग जान से मार डालने के लिए प्रवृत्त हुए थे। एक श्रेष्ठ पुरुष ने कहा है, "No Prophet is worshiped in his own Land."

Most Misunderstood

ईमर्सन ने कहा है, "To be great is to be misunderstood." कई श्रेष्ठ पुरुषों के जीवन में ऐसे प्रसंग आये हैं। श्री गुरुजी के बारे में समय-समय पर गलत-फहमी फैलायी गई, इसको यदि ख्याल में रखा तो ऐसा लगता है, He is in a good company. लेकिन यह मापदंड श्रेष्ठता का नहीं हो सकता। एक नेता का कहा हुआ यदि माना जाये तो मूल्यांकन बदल जायेगा। उन्होंने कहा कि श्रेष्ठता का मापदंड है, The extent of difficulties Surmounted. हमारे यहाँ ही नहीं, विदेशों में भी श्रेष्ठत्व का मूल्यांकन किस ढ़ंग से किया जा सकता है इसकी स्पष्ट कल्पना है।

एक बार अपने वर्धा जिला संघचालक जी पूज्य अप्पाजी जोशी की बातचीत महात्माजी से चली। अभी की और स्थायी लोकप्रियता की दृष्टि से यह उदाहरण है। अप्पाजी जब

युवा थे, संघ की स्थापना भी नहीं हुई थी, तब उन्होंने महात्माजी से यह प्रश्न पूछा। उन्होंने उत्तर दिया "देखो, तुमने दो नाम सुने है, Julius और Jesus. Julius सम्राट थे। आज दुनिया में उनके कितने अनुयायी है यह देखो और Jesus फकीर थे, आज दुनिया में उनके कितने अनुयायी है, कौन श्रेष्ठ है? स्थायी मापदंड बहुत अलग होते हैं। इसलिये आज लोग परम पूजनीय गुरुजी का सही मूल्यांकन नहीं कर पायेंगे। परंतु, समय उनके व्यक्तित्व को, कृतित्व को, तपश्चर्या को, पूरी तरह से न्याय देगा इसमें कोई सन्देह नहीं।

कई पुरुष प्रसिद्धि के कारण श्रेष्ठ प्रतीत होते हैं, वे पहाड़ के समान होते हैं। कहते हैं जो पहाड़ दूर से ही मनोरम्य दिखते हैं और यदि उनके नजदीक जाते हैं तो उनका असली रूप कांटे पत्थरवाला नजर आता है।

अन्य धर्मों के प्रति आदर

यहाँ बिलकुल उलटा मामला था। जितना नजदीक जाओगे उतना व्यक्तित्व का मनोहर सौन्दर्य अधिकाधिक आकृष्ट करता था। उन के बारे में अनेक गलत बातें फैलाई गई है। जैसे एक बार अकारण ऐसा प्रचार किया गया की वे अहिन्दुओं के विरोधक हैं। बिलकुल गलत बात है। गुरुजी ने स्पष्ट रूप से कहा है कि हम सभी धर्मो के बारे में आदर की भावना रखते हैं। सभी आध्यात्मिक महापुरुषों के विषय में उनके मन में सम्मान की भावना थी। एक बार की घटना है। कार्यकर्ताओं के मार्गदर्शन के लिये एक पुस्तिका लिखी गई। उसे प्रकाशित करना था। उसमें सद्गुणों के उदाहरणों के नाते महम्मद साहब और ईसा मसीह के जीवन की कुछ घटनाओं का निर्देश था। इस तरह की पुस्तिका प्रकाशित करना श्री गुरुजी को कहाँ तक अच्छा लगेगा ऐसा प्रश्न हमारे एक मित्र के मन में पैदा हुआ। उन्होंने श्री गुरुजी से सीधा ही पूछ लिया। श्री गुरुजी ने कहा, "इसमें क्या आपत्ति है? महम्मद और ईसा दोनों ही श्रेष्ठ धार्मिक महापुरुष थे। उनके जीवन की घटनाएँ उदाहरण के स्वरूप सबके सामने रखना अच्छा ही है।" महम्मदी मत या कुरान या महम्मद साहब से उनकी कोई शिकायत नहीं थी। इन श्रेष्ठ तत्वों और व्यक्तियों का नाम लेकर अपना राजनैतिक स्वार्थ सिद्ध करने के लिए यहाँ के मुसलमानों को अराष्ट्रीय बनाने के प्रयास का उन्होने विरोध किया। महम्मदी मत का पूरी तरह पालन करते हुए

भी यहाँ का मुसलमान पूरी तरह से राष्ट्रीय हो सकता है, ऐसा उसमें होना चाहिए, यही उनका आग्रह था। पारसियों को तो वे अग्निपूजक हिन्दू ही मानते थे। कोई कुरान पढ़ सकता है, कोई बाइबिल पढ़ सकता है; कोई मस्जिद में तो कोई गरिजाधर में जा सकता है। उपासना का पूरा स्वातंत्र्य है। हमारे धर्म की यही विशेषता रही है। आप वेद पाढ़िए, कुरान पढ़िए, बाइबिल पढ़िए, किन्तु इस राष्ट्र के साथ एकात्म होकर रहिये। इस भारत को माता के नाते प्रणाम करना चाहिए। यहाँ की संस्कृति और परंपरा के साथ एकात्म होना चाहिए। यहाँ के महापुरुषों को अपना राष्ट्रीय महापुरुष मानना चाहिए। कुरान भी पढ़ सकते हो और गिरजाघर भी जा सकते हो।

संघ याने समग्र राष्ट्र

कई बार उनकी प्रसिद्धिपरांगमुखता के कारण कुछ टीकाएँ होती थी। ऐसा लगता है कि अन्य कोई नेता होता तो बहुत कुछ प्रसिद्धी प्राप्त भी होती। स्वयं बढकर प्रसिद्धि से दूर रहने के कारण इस प्रकार की भ्रांतियाँ फैल सकती है। कई लोगों ने कहा कि, "हाँ भाई! श्री गुरुजी की तपश्चर्या बड़ी थी, लेकिन देश का पूरा चित्र, पूरा विचार उनके सामने नहीं था। वे केवल संघ का ही विचार करते थे।" यह कहने वाले नहीं जानते हैं कि आर.एस.एस. यह कोई दल नहीं, संस्था नहीं, पंथ-संप्रदाय नहीं, समाज के अन्तर्गत खड़ा किया हुआ एक संगठन भी नहीं, जैसे परम पूजनीय डॉक्टरजी तथा श्री गुरुजी का विचार है, "संघ यानि समग्र राष्ट्र" और इसी दृष्टि से समग्र समाज के विषय में उनके मन में चिंता थी। समाज का जो शोषित, दलित, पीड़ित हिस्सा है, उसकी हालत देखकर उनके मन में बड़ी पीड़ा होती थी। मैं और हमारे कुछ कार्यकर्ता जो संघ में है, उनसे ही प्रेरणा लेकर मजदूर संघ में कार्य करते हैं। और भी लोग विश्वहिन्दू परिषद में गये हैं, वनवासी क्षेत्र में जाकर बसे है और उनकी सेवा कर रहे हैं, जहाँ कोई प्रसिद्धी नहीं, समाचार नहीं, रेडियो नहीं; और भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में जाकर प्रचार कर रहे हैं, उन सभी लोगों ने श्री गुरुजी से ही प्रेरणा प्राप्त की है।

मुझे स्मरण होता है कि उनके विचार कितने स्पष्ट थे। अलग- अलग क्षेत्रों के विषय में भी विचार कितने स्पष्ट थे। मैं INTUC (इन्टक) में था। इन्टक के एक अधिवेशन में,

जमशेदपुर में, जनरल काउन्सिल में मेरा निर्वाचन हुआ। मैने वापिस आकर श्रीगुरुजी को बताया कि मैं चुना गया हूँ। मन में बड़ा आनन्द था। तब उन्होंने पूछा, "क्यों! बड़ा समाधान हो रहा है?" मैंने कुछ कहा नहीं, हो ही रहा था। उन्होंने आगे पूछा, "अच्छा, बताओ किस Constituency से तुम्हारा चुनाव हुआ है? मेंने कहा, "Manganese Constituency से।" श्रीगुरुजी ने पूछा कि "उसमें कितने मजदूर काम करते हैं?" मैंने कहा, "तीस हजार।" उस पर उन्होंने पूछा, "भाई! एक प्रश्न का सीधा उत्तर दो, घुमा फिरा कर नहीं।" प्रश्न पूछा "यह जो तीस हजार मजदूर है, जिनके प्रतिनिधि के रुप में तुम INTUC के General Council में चुने गये हो, क्या उनके प्रति तुम्हारे हृदय में वही धारणा है जो तुम्हारी माँ को तुम्हारे प्रति है?" मैंने ईमानदारी से कहा कि, "नहीं।" तब उन्होंने हँसकर कहा, "तुम इन्टक के जनरल कॉन्सिलर हो सकते हो, भगवान के नहीं। हमें तो ऐसा आदमी चाहिये जो भगवान के जनरल कॉन्सिल के लिये योग्य हों।" सभी क्षेत्रों के विषय में उनके मन में स्पष्ट विचार थे।

दोष गलतफहमी फैलाने वालों का

मुझे एक प्रसंग का स्मरण होता है। एक कम्युनिस्ट नेता प्रो. हीरेन मुखर्जी के साथ बातचीत हो रही थी और जब मैंने उनको कहा कि संपत्ति के विषय में हमारी यह भूमिका है -

यावद् भ्रियेत जठरं, तावत् स्वत्वं हि देहिनाम्।

अधिकं योऽभिमन्येत स स्तेनो दण्डमर्हति ॥ - श्री मद्भागवतम् (१४.८)

अपने शरीर की आवश्यकतानुसार जो जितना अनाज अपने उदर में लेता है , इतनी ही संपत्ति धारण करने का व्यक्ति को अधिकार है। उससे अधिक की कामना करने वाला चोर है और दण्ड का पात्र है। उन्होंने पूछा, "क्या यह Mr. Golwalkar ने कहा है?" तब मेने कहा "वास्तव में यह श्री गुरुजी ने कहा है। हम क्यों झूठ बोलें?" उन्होंने कहा, "माफ करना, हमारे मन में जो उनकी Image है उससे यह मेल नहीं खाता।"

हमने कहा, "यह हमारी नहीं गलतफहमी फैलाने वालों की भूल है। अर्थक्षेत्र में, सामाजिक क्षेत्रमें, उनका विचार था कि आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो, सामाजिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो, शासकीय सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो। झूठ फैलानेवाले कुछ भी कह सकते हैं। कहीं भी, व्यक्ति या व्यक्ति-समूह के बारे में केन्द्रीयकरण नहीं।"

रोग से खतरनाक इलाज

आगे चलकर हमें कौनसी समाजरचना करनी चाहिये उसकी स्पष्ट कल्पना उनके मन में थी। संघवाले तो अपने ही विचार बताते हैं। दूसरों के विषय में नहीं सोचते, ऐसा झूठ कुछ लोग फैलाते है। मगर आदर्श समाज रचना कैसी होगी, उसका विचार उन्होंने रखा। पश्चिम के तथाकथित प्रगतिशील जो विचारक हैं उनको Leftist कहा जाता है। और सभी जानते हैं कि कहीं एक केन्द्र मान लिया जाय और उससे थोड़ा Left जायें तो Socialism और उससे और थोड़ा Left जाने से Communism और उससे अधिक आगे जाने से Anarchism कहते हैं। Anarchism श्रेष्ठ Leftism माना गया है। Anarchism के प्रणेता बाकुनीन (Bakunin) और प्रोपोट्कीन (Propotkin) ने कहा कि खूनी क्रांति के फलस्वरूप आज यदि शासन टूट जाता है तो स्वाभाविक रीति से शासन विहीन,स्वयंशासित समाज का निर्माण Automatically हो जायेगा।

कार्ल मार्क्स ने भी Higher Phase of communism में शासनविहीन सामाज की कल्पना की किंतु, वे मानते थे कि क्रांति के पश्चात Automatically शासन विहीन समाज का निर्माण होगा और वह ठीक टिका रहेगा यह कहना अव्यवहारिक है। इस तरह की समाज रचना के लिये पर्याप्त पूर्व तैयारी चाहिए। इस पूर्व तैयारी के रूप में उन्होंने Dictatorship of Proletariat की कल्पना की। इस डिक्टेटरशिप, तानाशाही के द्वारा समाज स्वयंशासन के लिये तैयार हो जायेगा और उस अवस्था में शासन स्वयं अपने को नष्ट कर देगा यह मार्क्स का विचार था किन्तु, अनार्किस्ट सोचते थे कि यह विचार भी उतना ही अव्यवहारिक है। एक बार तानाशाही स्थापित होने के पश्चात, उसको अखण्ड बनाये रखने की चेष्टा सत्ताधारी करेंगे। तानाशाही स्वयं, अपने को विसर्जित करेगी, यह

कहना मनुष्य स्वभाव विषयक अज्ञान का ही परिचायक है। शासन का गुण है, Self perpetuation और Self expantion.

समाज रचना की सुस्पष्ट कल्पना

इस तरह दोनों विचार प्राणालियाँ एक दूसरे को गलत बताती थी। श्री गुरुजी का विचार था कि, दोंनों की एक दूसरे के विषय में की हुई टीका तथा उठाई हुई आपत्ति सही थी। "बिना पूर्व तैयारी के क्रांति के पश्चात् सीधे शासन विहीन समाज की रचना, संभव नहीं" यह मार्क्स का विचार तो श्री गुरुजी ठीक मानते थे; किन्तु मार्क्स की बताई हुई उपाय योजना, यानि पूर्व तैयारी के रूप में तानाशाही की स्थापना, यह भी गलत और खतरनाक है। A remedy worse than the diseases. वे कहते थे कि हिन्दुस्तान में भी शासनविहीनता को आदर्श माना गया था।

न राज्यं न च राजाऽसीत् न दण्ड्यो न च दाण्डिक:।

धर्मेणैव प्रजा: सर्वा रक्षन्ति स्म परस्परम् ॥ - महाभारत शांति पर्व (१२.५९.१४)

यह प्राचीनकाल के आदर्श समाज का वर्णन महाभारत के शांतिपर्व में भीष्माचार्य ने युधिष्ठिर को बताया। उस आदर्श अवस्था में न कोई सामाजिक संविधान था और न कोई Disciplinary Action की व्यवस्था। संपूर्ण समाज स्वायत्त स्वयं शासित था। किन्तु इस अवस्था की पूर्व तैयारी थी, धर्म की रक्षा।

सभी लोग यदि हृदय में धर्म के संस्कार ग्रहण करते हैं, तो शासन-विहीन या न्यूनतम शासनयुक्त समाज रचना का निर्माण उनके लिये संभव होता है। श्री भीष्माचार्य ने कहा, "धर्मेणेव प्रजा सर्वा: रक्षन्ति स्म परस्परम्।" धर्म के ही सहारे सब एक दूसरे की रक्षा करते थे। यह धर्म का, समष्टि का, अंगांगी भाव का यानि धार्मिकता का संस्कार व्यक्ति के हृदय में अंकित करना, यही सही अर्थ में Anarchism की या न्यूनतम शासनयुक्त समाज रचना की पूर्व तैयारी है।

शासनविहीनता: हिंदु आदर्श

यहाँ यह दोहराने की आवश्यकता नहीं कि धर्म यानि Religion नहीं, धर्म यानि Universal laws; और उनके प्रकाश में समय-समय पर की गई समाज रचना। श्री गुरुजी जिस आध्यात्मिक Order के थे उसी Order की एक श्रेष्ठ साध्वी Margaret Noble उपाख्य Sister Nivedita ने कहा है, "Hinduism is a fragment in a vast social, industrial, economic scheme called 'Dharma. A man may well and rightly be the servent of 'Dharma' even without calling himself a Hindu." न्यूनतम शासन की समाज रचना धर्म के आधार पर हो सकती है। यह एकमेव सनातन शास्त्रीय समाज है। यानि अति पुरातन होते हुए भी अति नूतन, अत: सनातन।

श्री गुरुजी राष्ट्र हित का सभी पहलुओं से विचार करते थे। एक स्पष्ट चित्र उन के सामने था। सरकार के बारे में, वे उसे राष्ट्र कार्य का साधन मात्र समझते थे। सभी राजनैतिक दलों को समान दृष्टि से देखते थे। राष्ट्र की प्राचीन आत्मा की जो प्रतिक्रिया सरकार की किसी नीति और कार्य के विषय में, किसी भी समय होती थी, वही प्रतिक्रिया उनकी होती थी। न तो उन्हें प्रेम था, न विद्वेष। जो बातें राष्ट्रहित की होती थी, उनकी प्रशंसा, और राष्ट्रहित के विरुद्ध थी, उनकी आलोचना करते थे। जब भारत स्वतन्त्र होने लगा, उस समय हमें मालूम है कि महात्माजी ने श्री गुरुजी को बुलाया और कहा कि हमको तुम्हारा समर्थन प्राप्त होना चाहिये। श्री गुरुजी ने Law and order कायम रखने के लिये without reservations पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया। जब देश के विरोधी लोगों के द्वारा दिल्ली में शासन पलटनें का षडयन्त्र बन रहा था, तब सरदार वल्लभभाई पटेल को कहा और देश को बचाया। पूज्य महात्माजी ने ११ सितम्बर को गुरुजी से बातचीत की थी।

सरकार : राष्ट्रकार्य का साधन मात्र

जिस समय संघ पर प्रतिबन्ध आया उस समय शासन के प्रमुख नेता के साथ जो पत्र-व्यवहार हुआ वह हमारे सामने स्पष्ट रूप से है। वास्तव में घोर अन्याय हुआ था। कुछ दोष नहीं था तो भी जानबूझकर Party Politics के कारण संघ को उसमें Involve,

समाविष्ट किया गया। उस पत्र-व्यवहार में विरोध की छाया भी नहीं थी। उल्टे विशाल हृदय को धारण करते हुए पं. जवाहरलालजी को पत्र में लिखा कि हम सबको मिलकर राष्ट्र का निर्माण करना है। शासकीय क्षेत्रों में आपका कार्य राष्ट्रहित में, सांस्कृतिक क्षेत्र में हमारा कार्य, दोनों अपने-अपने ढ़ंग से राष्ट्र के निर्माण का प्रयास करें और दोनों में Co-ordination स्थापित करें, उसी में राष्ट्र का हित निहित है। उस समय जब किसी भी सामान्य व्यक्ति के हृदय में बदले की भावना आ सकती थी। प्रतिबन्ध की अवधि में जो अन्याय संघ पर हुआ, उसके कारण Righteous indignation मन में आना अत्यन्त स्वाभाविक था। इतने कष्ट सहने पड़े। अकारण, जानबूझकर अन्याय के फलस्वरूप। किन्तु श्री गुरुजी ने उस समय अपने विशाल हृदय का, सच्चे राष्ट्रवाद का परिचय दिया। जगह-जगह उन्होंने कहा, "जो हुआ सो हो गया, सरकार भी अपनी ही है। जिव्हा भी अपनी और दान्त भी अपने। अब तो 'वयम् पंचाधिकं शतम्' यह सूत्र ध्यान में रखकर हम सब चलें यही श्रेयस्कर हैं।" व्यक्तिगत एवं संस्थागत अहंकार न रखते हुए संपूर्ण देश का, संपूर्ण राष्ट्र का विचार श्री गुरुजी ने रखा।

गोवा सत्याग्रह हुआ तब पं. जवाहरलालजी को स्पष्ट संदेश दिया कि गोवा के लिये आप योजना बनायें, हम सब तिरंगे के नीचे, आपके नेतृत्व में आगे बढेंगे। आप जितने चाहें उतने स्वयंसेवक मैं देता हूँ। आपका समर्थन हम करेंगे। छोटा दलगत विचार नहीं किया। संपूर्ण राष्ट्र का विचार किया।

श्री लालबहादुर शास्त्री जी के साथ श्री गुरुजी के संबन्ध बहुत अच्छे थे। १९६५ की भारत पाकिस्तान की लड़ाई के समय संघ ने सरकार को पूर्ण सहयोग दिया। १९७१ में बंगला देश की घटना के पश्चात श्रीमती इन्दिरा गांधी को गुरुजी ने पत्र लिखा। वह पत्र उनकी राष्ट्रीय मनोवृत्ति का परिचायक है। हमारे लिए आनंद की बात है कि श्रीमती इन्दिराजी ने भी बड़ा आत्मीयतापूर्ण प्रत्युत्तर दिया। यह संतोष की बात है।

सरदार पटेल के साथ उनका जो सम्बन्ध था उसे सभी जानते हैं। बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध था। जहाँ एक ओर कई बातों में प्रशंसा व सरकार का समर्थन किया, वैसे ही राष्ट्रहित विरोध

की बातें आई, तो उनकी टीका और निषेध करने में कोई कसर नहीं रखी। न वे सरकार के समर्थक थे और न वे विरोधी ही थे। जैसे कहा है कि, न मे द्वेषोऽपि न प्रिय:।

आज उनके सभी विचारों का सिंहावलोकन करने की आवश्यकता हैं। उनका सच्चा जीवन-दर्शन कराने की आवश्यकता है। जो गलतफहमियाँ उनके विषय में हैं केवल उनका ही जिक्र कर रहा हूँ। हमारे एक ईसाई मित्र को इस बात से बड़ा आश्चर्य हुआ जब उन्होंने गुरुजी के कमरे में बाईबल देखी। उन्होंने कहा "हम तो समझते थे कि वे तो सब अहिंदू लोगों के विरोधी हैं। यहाँ बाइबल कैसे ?" हमने कहा, "देखिये, बाइबल के विषय में जितना उनका अध्ययन है वैसा शायद ही किसी Bishop का होगा। जिस कालेज में वे पढ़ते थे, बाइबल के क्लास का पहला इनाम उन्ही को मिलता था, किसी Christian को नहीं। और ईसा को जितने अच्छे ढ़ंग से श्री गुरुजी समझते थे शायद ही और कोई इतने अच्छे ढ़ंग से समझता था। और कितने लोग उसको इतनी अच्छी तरह समझते हैं इस विषय में मुझे शंका है।"

Father! Forgive Them

मुझे एक प्रसंग का स्मरण होता है। संघ शिक्षावर्ग का समारोह था। भाषण के लिये जाने से कुछ पहले लोगों ने कहा, "देखिये गुरुजी, यहाँ आपके विषय में कई लोग निरर्थक आरोप लगाते है कि आप इसाईयों तथा मुसलमानों के विरोधी है।" यह बात उनके मन में थी। समारोह के भाषण का दृश्य भी अच्छा था। पीछे भगवान सूर्यनारायण अन्तिम चरण में थे। आकाश में लालिमा थी। मनोरम दृश्य था और उस पृष्ठभूमि में परम पूजनीय श्री गुरुजी का वह चेहरा, दाढ़ी है, जटा है और स्वयंसेवकों के सामने खड़े है। श्री गुरुजी ने कहा, "देखो, हमारे बारे में अनेक गलत बातें की जाती है। मैं उनके बारे में एक बात कह सकता हूँ, Father, forgive them, for they know not what they say."

मुझे स्मरण होता है कि नागपुर के एक अहिन्दू राजनैतिक नेता को मैं उस समय श्री गुरुजी के साथ मुलाकात करवाने ले गया था। एक घंटे तक बातचीत हुई। उसके बाद उन्होंने कहा कि गुरुजी आपके ऐसे विचार है, यह तो हमें पता ही नहीं, हमें तो ऐसा बताया गया है, वैसा बताया गया है। तब श्री गुरुजी हँस दिये। उन्होंने कहा, "आप हँसते

हैं, जो लोग ऐसी बातें करते हैं उसके प्रति भी आप हँसते हैं?" उन्होंने एक गाली भी दी क्योंकि वे एक Prograsive political leader थे और कहा, "जो लोग गलत बातें करते हैं आपको तो चाहिये कि उन्हें 'ठीक' करे।" तब श्री गुरुजी ने पुन: हँसकर कहा, "देखो मेरी जो भूमिका है वह आप जानते है। I have come not to judge them but to serve them."

Not to destroy

और एक जगह इसी तरह एक अहिन्दू के साथ बात चल रही थी। उसने पूछा, "संघ के न होने के कारण लोगों का क्या नुकसान होगा ?" बहुत कुछ तो गुरुजी ने नहीं कहा। केवल इतना कहा, "आप एक बात याद रखिये-I have come to fulfil, not to destroy." अब यह सारे वाक्य जो स्वाभाविक रूपसे उनके मनमें आते थे यह किस प्रकार का मन था, कितना विशाल मन था उसका परिचायक है। तरह तरह की भ्रांतियाँ उनके बारे में हैं, उनको दूर करना और उनका सच्चा दर्शन लोगों को कराना यह अब हमारा उत्तरदायित्व है और उसको पूरा करने की शक्ति वे देंगे ऐसा हमें पूरा विश्वास है। आज उनकी मृत्यु के बाद विभिन्न लोगों के द्वारा जो बातें आ रही है, यह आश्चर्यजनक है।

निर्विवाद श्रेष्ठत्व

एक कट्टर संघ विरोधी साप्ताहिक ने अपने Editorial में जो श्रद्धांजलि दी, उसमें उनके जीवन का जो वर्णन है, वह इतने अच्छे शब्दों में है कि मैं आश्चर्यचकित रह गया। इससे यह सैद्धान्तिक रूप से स्पष्ट हो जाता है कि किसी को मतभेद भले ही हो, परंतु उनके व्यक्तित्व का जो श्रेष्ठत्व है, सभी लोगों ने उसे स्वीकार किया, विरोधियों ने भी। उनकी मृत्यु के पश्चात यह स्पष्ट होता है। वैचारिक मतभेद रहना चाहिये यह भी श्री गुरुजी कहते थे। हम Unity चाहते हैं उसका मतलब यह नहीं कि हम Uniformity of thought चाहते हैं। सबके विचार समान हो ऐसा हमारा मतलब नहीं। अलग-अलग वातावरण है, अलग-अलग स्तर पर लोग खड़े हैं, शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक रूप से हर एक का अलग-अलग विचार हो सकता है। विचारों में वैशिष्ट्य भी होना चाहिये। लेकिन सारी

विविधताओं को कायम रखते हुए भी कुछ जो common features है, common बातें है, जैसे कि मातृभूमि के प्रति श्रद्धा, धर्म, संस्कृति के प्रति श्रद्धा, इन बातों पर एकमत होना चाहिये। इस तरह 'Unity in diversity' ही उनका विचार था और कई बातों पर लोगों ने उनके साथ मतभेद रखे होंगे। उनमें असंतोष की बात नहीं थी, दु:ख की बात नहीं थी; लेकिन उनकी मृत्यु के बाद जिस ढ़ंग से यह सारी प्रतिक्रियाएँ आ रही हैं, प्रत्यक्ष विरोध करने वाले लोगों पर भी उनकी तपश्चर्या और व्यक्तित्व की जो छाप उनके हृदय पर है, हमारे सामने प्रकट हो जाती है।

A Barrier

डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर का कार्य तथा श्री गुरुजी का कार्य परस्पर पूरक होता तो अच्छा होता ऐसा विचार मेरे मन में था। एक बार बाबा साहेब के साथ यह बात छिड़ी। उन्होंने हँसकर कहा, "देखो, तुम बच्चे हो। समझते नहीं। मेरी बात समझने की कोशिश करो। Between the scheduled castes and Communism, Ambedkar is barrier, between the rest of the society and Communism Golwalkar is the barrier." बाबासाहब के इस वाक्य को समझना राष्ट्र की दृष्टि से आवश्यक है।

यह बात उल्लेखनीय है कि विश्व बौधमहासभा के प्रधान मान्यवर Yu Chan Than जब भारत में आये थे तब उनकी श्री गुरुजी के साथ प्रदीर्घ वार्ता हुई थी और दोनों में एकमत हो गया था कि जम्बूद्वीप में (S.E.Asia) सनातन धर्मियों की एकता प्रस्थापित होनी चाहिए, सनातन धर्म के आधार पर। जैन मत के स्यादवाद के वे कट्टर प्रशंसक थे। विश्वहिंदू परिषद के कार्य में जैन तथा बौध आचार्यों को प्रविष्ट कराने में उनके व्यक्तित्व का बहुत बड़ा हाथ रहा है।

In course of his very first visit at Calicut he so impressed the people that one of them (Shri P. K. M. Raja an Advocate) remarked, "He is the highest Personality of the mightiest Hindu organisation is his least qualification."

Blessings of Both

Some one has said, it is signifient that he served and attended upon both, Swami Akhandanand ji and Dr. Hedgewarji in their last Sickness. Did his work indicate the happy blending of the blessings of both? From Akhandanandji he inherited among other things his KAMANDALU; from Doctorji, the responsibility of Sarasanghchalakship. He acquitted himself in the most creditable way in case of both these charges. Needless to add that his power of concentration, inspte of physical ailment or circumstantial diversion was proverbial.

He treated all his followers as his friends, and all his friends became volantarily his followers.

Of Julius Caesar it is recorded that he could call every of his thousands of soldiers by his first name. Shri Guruji Could do this in case of lakhs of his friends and followers. A Nagpur Daily, which often indlged in criticism of R.S.S., wrote in its leading article after his death that this became possible not merely due to his memory which was certainly extraordinary , but to the deep affection he felt for every one who came in his contact.

आध्यात्मिक भूमिका

उनका जीवन हमने देखा है। पार्थिव शरीर के नाते वे हमारे बीच में नहीं हैं। लेकिन उनका जो यह संपूर्ण जीवन है, वह हमें मार्गदर्शन कर रहा है। ऐसा अखण्ड परिश्रमी कोई व्यक्ति नहीं जिसने इतने लम्बे अरसे तक लगातार इतना परिश्रम किया हो। सारा कार्य करते हुए भी अहंकार को कभी भी अपने मन में नहीं आने दिया। प्रसिद्धि की भी कभी लालसा नहीं रखी। यह कितनी बड़ी बात है, इसका हम विचार करें। उनसे कम कर्तृत्व करनेवाले लोग भी दौड़ जाते हैं अखबारों के पास और रेडियों के पास, कि हमारा नाम क्यों नहीं आता? श्री गुरुजी ने कभी भी अपने नाम की परवाह नहीं की। वह प्रसिद्धी की लालच जिसे एक अंग्रेज कवि ने कहा Last spuz of noble mind, कार्य प्रवृत्त होने के लिये उसके भी ऊपर, एक आध्यात्मिक भूमिका होने के कारण गुरुजी उठ सकते थे। इसलिये

कि उनका मन आध्यात्मिक था। उच्च श्रेणी का था। और इसी कारण जैसे एक मराठी कविने कहा है,

“फुलें कुणाला वहायचीं तर पुढे समाधि बरोबरी

झर झर झर झर वाट चालतो तिथेंच त्याची वाट पहा।”

यदि आप किसी को फूलों की माला अर्पण करना चाहते हो तो वह माला आप उसकी समाधि पर ही समर्पण कीजिये, वह बड़ी तेजी के साथ अपनी समाधि की ओर आगे बढ़ रहा है, आप वहीं उसकी प्रतीक्षा करें।

फूल चढ़ाने की जगह भी न दी

जिस समय श्री गुरुजी का महानिर्वाण हुआ, यह कविता मुझे स्मरण हुई। लगा कि इस प्रसिद्धिपरांगमुख महापुरुष ने, जिसने इतना तेजी से सारा कार्य किया है, शायद मन में यही कहा होगा। किंतु जब श्री गुरुजी का एक अंतिम पत्र पढ़ा गया तो उसमें उनकी समाधि न बनाने का आपने आदेश दिया है। जीवनकाल में तो सम्मान को स्वीकार किया ही नहीं, मृत्यु के पश्चात समाधि पर भी फूल चढ़ाने का अवसर किसी को प्राप्त ही न हों यह भी व्यवस्था उन्होंने की।

Saint in hurry

उनका तेजी से चलने का ढंग हम सबने देखा है। वे बड़ी फुर्ती से चलते थे। मानो उनकी जो क्रियाशीलता थी उसी का प्रतिबिंब उनके चलने में प्रकट होता था। Saint Francis of Assisi के बारे में कहा जाता था कि, “He was a Saint in hurry”, श्री गुरुजी के बारे में भी किसी ने यही कहा है, “परिणामों की परवाह न करते हुए इसी जल्दी के कारण अपने शरीर की मोमबत्ती उन्होंने दोनों तरफ से जलाई।” कई बार लोगों ने आग्रह किया कि विश्राम लेना चाहिये। किन्तु वे कहते थे कि विश्राम तो आखिर में लेंगे। बाद में बहुत विश्राम है।

How Lovely Light!

शरीर बहुत अस्वस्थ है यह जानते हुए भी वे यही बात कहते थे। कैन्सर के ऑपरेशन के पश्चात जिस ढ़ंग से उन्होंने तेजी के साथ प्रवास तथा कार्यक्रम प्रारंभ कर दिये, उनसे यह लगता था कि उन्होंने अपने मन ही मन भक्त हनुमान की तरह संकल्प किया होगा। भक्त हनुमान ने कहा -

"रामकाज कीन्हें बिना अब मोहे कहां विश्राम" इसी तरह शायद श्री गुरुजी ने कहा -

"राष्ट्रकाज कीन्हें बिना अब मोहे कहाँ विश्राम"। अविश्रांत परिश्रम करते-करते उन्होंने देह त्याग किया। जैसे आगे कहा, वे अपनी मोमबत्ती दोनों ओर से जला रहे थे। इस संदर्भ में मुझे एक अंग्रेजी कविता स्मरण हो रही है। जिसमें ठीक वो ही भाव निहित है, जो श्री गुरुजी के मन में इस विषय में होगा। पंक्तियाँ ऐसी हैं -

"My candle burns at both ends;

It will not last the night;

But ah, my foes, and oh, my friends-

It gives a lovely light!"

अपने शरीर के साथ अखंड घोर अन्याय करते हुए वे प्रकाश देते रहे, जो सभी का मार्गदर्शन करनेवाला था। जैसे जीवनकाल में वैसे मृत्यु में भी श्री गुरुजी ने हमारे सामने एक आदर्श प्रस्तुत किया है।

हमसे दूर भी, पास भी

कई बार ऐसा कहने की पद्धति है कि सूर्यनारायण अब डूब गया, अब अन्धेरा हो गया। शायद हमारे भी मन में ऐसे विचार आते हो। लेकिन हमारे सभी स्वयंसेवक बंधुओं को एक बात कहना चाहता हूँ। अपने एक क्षेत्र प्रमुख मा. श्री बापुराव जी मोघे और मैं श्री

गुरुजी की अंतिम बिमारी के दिन उनके पास बैठे थे। उन्हें बोलने की मनाही थी। लेकिन एक बात उन्होंने कह ही डाली। उन्होंने कहा कि भगवान जिन महान आत्माओं को किसी न किसी जीवन-कार्य को देकर भेजता है, इस धरती पर उनका जीवन कार्य यदि पूरा नहीं हुआ और बीच में ही देहत्याग करना पड़े तो उन्हें मोक्ष प्राप्त न करते हुए उनका जो जीवन कार्य अधूरा छूट गया हो, उसे पूरा करने की दिशा में प्रयत्नशील रहने के लिये भगवान कहता है; और जो लोग उसी कार्य को उठाये हुए हैं, उनको प्रेरणा, प्रोत्साहन और मार्गदर्शन देकर उसे पूर्ण करने का कार्य ये महान आत्माएँ अशरीरी अवस्था में ही करती हैं। स्वामी विवेकानंद जी ने शरीर त्याग दिया था, किन्तु महर्षि अरविन्द ने ऐसा लिखकर रखा है कि जब वे जेल में थे और उनके जीवन का सन्देश भगवान उनको दे रहा था, उस समय योग की दीक्षा स्वामी विवेकानंद ने अशरीरी अवस्था में ही वहाँ आकर दी। जब कि स्वामीजी ने तो कुछ वर्ष पूर्व ही देह का त्याग किया था, तब भी स्वामी जी यहाँ आते थे और उन्हें योग की दीक्षा देते थे। तो इस तरह महान आत्माओं का जीवन कार्य पूर्ण होने तक वे कार्यरत ही रहती है और जीवन कार्य पूर्ण होने के उपरान्त ही मोक्ष प्राप्ति की अनुमति उन्हें मिलती है, पहले नहीं। यह बात श्री गुरुजी ने स्वयं कही है। मैं समझता हूँ कि जैसे कोई खास प्रसंग न था, शायद हम लोगों को मार्गदर्शन करने की दृष्टि से ही यह बात उन्होंने कही होगी।

अन्धेरा नहीं

लेकिन यदि इस दृष्टि से भी देखा जाय तो सभी स्वयंसेवकों को, सभी कार्यकर्ताओं को, इस बात का विश्वास हो जाता है कि श्री गुरुजी का पार्थिव शरीर नष्ट हुआ होगा, लेकिन उनकी आत्मा हमारे साथ है। जब तक उनका जीवन कार्य पूरा नहीं होता, तब तक हम सब लोगों का मार्ग दर्शन करने के लिये जैसे पहले, वैसे आज भी, परम पूजनीय गुरुजी हमारे बीच में ही हैं। यह विश्वास हम सब लोगों को हो रहा है। हाँ, फरक एक ही है, कि पहले उनकी आत्मा को शरीर का बन्धन था इसलिये मन में चारों ओर भले ही रहते थे लेकिन शरीर स्थानबद्ध था, किसी एक ही स्थान पर रह सकता था। यह जो शरीर का

बन्धन था वह अब हट गया, इसलिए उनकी अशरीरी आत्मा हम सभी स्वयंसेवक बंधुओं के साथ एक ही समय रह सकती है। यह भी एक बात हम लोगों के मन में आ सकती है और इसी दृष्टि से सर्वसाधारणतया कहा जाता है कि अब अंधेरा हो गया हैं। ऐसा कहने की आवश्यकता नहीं।

पुनः डॉक्टर जी

उन्होंने जो अंतिम व्यवस्था हमारे लिये रखी है वह भी खूब सोच समझ कर ही रखी है। वह हम सब लोगों के लिये ठीक रहेगी। इसमें हमें कोई संदेह नहीं। नये सरसंघचालक के नाते मा. श्री बालासाहेब देवरस जी की नियुक्ति परम पूजनीय श्री गुरुजी ने अपने अंतिम पत्र में की है। परम पूजनीय गुरुजी ने मा. बालासाहेब के विषय में पूना संघशिक्षा वर्ग में परिचय दिया, "आप में से कुछ स्वयंसेवकों ने संघनिर्माता, प्रतिष्ठाता, संस्थापक परम पूजनीय डॉक्टर जी को नहीं देखा। तो उनके मन में वह इच्छा अधूरी रही होगी। परम पूजनीय डॉक्टरजी का दर्शन कैसे होगा। अब तो हो नहीं सकता। उन्हें निराश होने की आवश्यकता नहीं। यदि किसी को भी यह देखना है कि परम पूजनीय डॉक्टरजी कैसे थे, उन का व्यवहार कैसा था? तो मैं कहता हूँ आप मा. बालासाहेब की ओर देखिये, आपको पूज्य डॉक्टरजी का पूरा दर्शन हो जायेगा। "

इस तरह ठीक नियुक्ति, ठीक योजना और उनकी आत्मा हमारे साथ है। इन सब बातों का यदि हम विचार करते हैं तो निराश होने की बात नहीं। शोक होना स्वाभाविक है। शोक के कारण हमारा कोई कर्तव्य उनके प्रति है ऐसी भावना सजग रहेगी और हमारी भावपूर्ण श्रद्धांजलि, क्रियाशीलता के द्वारा प्रकट होगी।

"मैं नहीं, तू ही"

महानिर्वाण के पूर्व परम पूजनीय गुरुजी ने हमारे लिए कौनसी वसीयत छोड़ी है यह जानना भी उचित होगा। श्री गुरुजी की अंतिम यात्रा के समय पढ़े गये तीन पत्र और उनका ठाणे संघ शिविर का भाषण हमारे लिये उनकी वसीयत है। ये उनका Public Testaments है। जैसे नेपोलियन का सेन्ट हेलिना के टापू से बंदी अवस्था में अपने पुत्र को लिखा पत्र एक Political Testament माना जाता है, जैसे डॉ. बाबासाहेब

आम्बेडकर जी का काठमाण्डु का भाषण उनके Public Testament की योग्यता रखता है, वैसे परम पूजनीय श्री गुरुजी का हमारे लिए जीवन संदेश क्या है, यह इस प्रसंग में स्पष्ट होता है। एक विद्वान को हस्ताक्षर देते समय श्री गुरुजी ने लिखा है "मैं नहीं, तू ही", संपूर्ण आत्मसमर्पण। जैसे नारद भक्ति सूत्र में कहा है "तद् सुखेन सुखित्वम" To be happy in 'HIS' happiness, परमात्मा के चरणों में सब कुछ समर्पण हम सब लोगों के लिये यही उनके जीवन का मार्गदर्शक संदेश है, वसीयत है।

(परम पूजनीय श्री गुरुजी के देहावसान के तेरहवें दिन बड़ौदा में आयोजित श्रद्धांजलि कार्यक्रम के अवसर पर श्रद्धेय दत्तोपंत जी का उद्बोधन, "नवदधीचि" नाम से श्री चम्पकलाल जी सुखाड़िया ने सूरत से १३.०८.७३ को प्रकाशित किया था।)"